IOSR Journal of Research & Method in Education (IOSR-JRME)
e-ISSN: 2320–7388,p-ISSN: 2320–737X Volume 5, Issue 1 Ver. III (Jan - Feb. 2015), PP 56-59
www.iosrjournals.org

"वागड क्षेत्र के प्रमुख लोक साहित्य का सामाजिक, सांस्कृतिक महत्त्व तथा कला सृजन पर प्रभाव"

डॉ. मनीषा चौबीसा
सह आचार्य
राजकीय मीरा कन्या महाद्यिालय, उदयपुर

सारांश :–राजस्थान प्रदेष धार्मिक मान्यताओं एवं आस्थाओं से जुड़ा हैं। यहाँ बौद्ध धर्म, से लेकर जैन, इस्लाम, एवं हिन्दू धर्म के साथ–साथ लोक देवताओं , लोक साहित्यों का भी संस्कृति पर भी विषेष प्रभाव पड़ा है।

साहित्य समाज की चेतना का प्रतिबिम्ब है। साहित्य से परम्पराओं, मान्यताओं तथा भावनाओं का संचार एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में होता है फिर चाहे वह हिन्दी भाषा का हो या अन्य भाषा का, उसका उद्देष्य समाज को सही दिषा प्रदान करना है। लौकिक साहित्य समाज, संस्कृति, स्थान, परिस्थिति, तथा विचारों को, कथा कहानियों द्वारा, संगीत एवं कला द्वारा, लोकोक्तियों एवं मुहावरों द्वारा या धार्मिक अनुष्ठानों द्वारा, संस्कारों एवं धारणाओं के माध्यम सेप्रसारित करते हैं और जन मानस में आत्मविष्वास जागृत करते हैं। इसका मुख्य उद्देष्य विधि विधानों, रीति–रिवाजों, विष्वासों और परम्पराओं का अनुषीलन कर नव पीढ़ी को सामर्थ्यवान बनाना है उसे आपस में जोड़े रखता हैं। इसी प्रकार के साहित्यों से रूढ़िवाद एवं आडम्बरों से युक्त समाज में जनमानस के कल्याण के प्रति कार्य करने वाले कुछ विचारकों या संतो ने समाज को नवीन दिषा प्रदान की। इन संतो में प्रमुख रूप से संत धन्ना, पीपा, जम्भोजी, मीरा, दादू, चरणदास, रामदास, हरिदास, कृष्णदास, आचार्य तुलसी सहित वागड़ क्षेत्र के संत मावजी का स्थान भी विषेष माना गया है। यह स्थान मुख्य रूप से आदिवासी बहुल क्षेत्र हैं और यहाँ का आदिवासी समाज मावजी महाराज का अनुयायी हैं।

लोक साहित्य किसी भी क्षेत्र विषेष की लोक संस्कृति रीति– रीवाजों, रहन –सहन , पहनावा भाषा एवं सामाजिक स्थिति की विषय सामग्री को अभिव्यक्त करते हैं। यह अभिव्यक्ति विभिन्न माध्यमों से की जाती है जिसमें कला भी एक है। कला के माध्यम जैसे चित्रकला, नृत्य, संगीत, काव्य आदि के द्वारा आदिवासी जीवन की झलक देखी जाती हैं। इन्हीं माध्यमो से लोक साहित्य में लोकाभिव्यक्ति की जाती है। लोक साहित्यों में संस्कारों का बोध होता है जिसको व्यक्ति के सामाजिक आर्दष, मूल्य एवं मान्यताएं निहित होती हैं। कला के माध्यम से परम्परागत मान्यताओं रीतिरिवाज, नैतिक मूल्य, आस्था, विष्वास तथा विचार एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तांतरित होते हैं और संरक्षित रहते हैं। यहाँ तक की पारिवारिक सम्बन्ध तथा पर्व व उत्सव की उत्सुकता भी कला व संस्कृति पर आधारित है और उसी के माध्यम से समाज में फलती–फूलती है जिसमें भारतीय लौकिक साहित्यों की महत्ती भूमिका हैं। सांस्कृतिक परम्पराओं का यह बहाव या बदलाव ही जीवन का मूल प्रयोजन है। अतः साहित्य एवं कला की विरासत नवपीढ़ी के लिए आवष्यक है यही वर्तमान परिदृष्य की उपादेयता भी है।

राजस्थान के वागड़ क्षेत्र में 1714 ई. में निष्कलंकी सम्प्रदाय के प्रर्वतक मावजी महाराज का जन्म हुआ। इन्होंने बेणेष्वर धाम पर धर्मोपदेष देते हुए पाँच ग्रन्थों की रचना की। यह लोक ग्रंथ वाद–विवाद शैली में रचे गये जिन्हें ''चौपड़ा'' कहा जाता हैं। यह चौपड वागड़ के आदिवासी जन समूह की झांकी प्रस्तुत करते है। इन चौपड़ों में मावजी को हिन्दू धर्म का दसवां अवतार ''कल्कि अवतार'' मानते हुए साधक की संज्ञा दी गई है जिन्हें शंख, चक्र, गदा पद्मसहित घोड़े पर सवार चतुर्भुज मूर्ति के रूप में प्रतिपादित किया हैं। इन चौपड़ों में मावजी ने आध्यात्म के साथ लौकिक व दैनिक ज्ञान तथा भविष्य की चर्चा भी की हैं। सम्पूर्ण उपदेषों को चित्रों के माध्यम से वार्णित किया गया है। प्रतिवर्ष बेणेष्वर धाम पर माघ शुक्ला पूर्णिमा को माही, सोम, एवं जाखम नदियों के त्रिवेणी संगम पर मेला भरता है जिसमें लाखों श्रद्धालु भाग लेते है अतः यह स्थान आदिवासियों का तीर्थ स्थल माना जाता हैं।

मावजी कालीन प्रमुख साहित्य–राजस्थान के दक्षिणी भाग डूंगरपुर बांसवाड़ा के जिलों में कृष्ण भक्त मावजी महाराज ने पंथ सम्प्रदाय को स्थापित किया। उनके समय (17 वीं 18 वीं) शताब्दी में पाँच विषाल सचित्र ग्रंथों की रचना हुई। जिनका नाप 2′X2′ हैं। इनमें से चार ग्रंथों की सचित्र प्रतियाँ मावजी के विभिन्न मंदिरों में सुरक्षित है। यद्यपि यह ग्रंथ लोक भाषा वागड़ी में रचे गये हैं परन्तु बाद में इसका हिन्दी भाषा में अनुवाद करके जन–जन के लिए उपयोगी बना दिया गया। इन ग्रंथों को डॉ. राधाकृष्ण वरिष्ठ ने अपने शोध परख लेखों द्वारा मेंवाड़ के आरम्भिक सचित्र ग्रंथों में भी जोड़ने का प्रयास किया। संत मावजी कालीन सचित्र ग्रंथों (चौपड़ों) की चार प्रतियाँ जिनका रचना काल संवत् 1784–1789 माना गया निम्न स्थानों पर सुरक्षित है –

1. सामसागर, श्री हरि मन्दिर बेणेष्वर, साबला।
2. श्री मेघसागर, हरिमन्दिर, शेषपुर धोलागढ़, उदयपुर।
3. प्रेम सागर हरिमन्दिर, पुंजपुर, डूंगरपुर।
4. रतन सागर, विष्वकर्मा मन्दिर, बाँसवाड़ा।

पाँचवा ग्रंथ अनंत सागर दुर्भाग्यवष चोरी होकर बिट्रिष सरकार के हाथों चला गया जिसमें भविष्य की तस्वीर को चित्रों के माध्यम से दर्षाया गया था। इसमें टेलीफोन, टेलीविजन, स्कूटर आदि की भविष्यवाणियॉ की गई थी। जैसे

– वायर वात होवेगा, डोरिया दीवा बरेगा, घर घर घुड़िया बंधेगा, परिये पापी वेसायेगा, अर्थात् वाहनों का विकास, दुपहिया तिपहिया गाड़ियों का चलन, पानी बिकेगा आदि।

इस प्रकार मावजी के चौपड़ों में रंगीन चित्रों द्वारा बेणेष्वर की महिमा तथा मनोहर मावजी की रास लीलाओं का सुन्दर चित्रण एवं वर्णन किया गया है। इन ग्रंथों का सबसे बड़ा भाग महारास खण्ड़ है जिसमें साधक स्तुति, भक्त स्तुति के साथ– साथ विभिन्न रागमालाओं में कृष्ण भक्ति तथा गीत गोविन्द के रस रंग हैं। चौपड़ों में भक्ति, ज्ञान, कर्म तथा कला का अद्‌भुत सामंजस्य देखा जा सकता है। इन चौपड़ों में वर्णित संवादों तथा चित्रों में परमात्मा तत्वों के साथ–साथ जीवन व्यवहार, दैनिक क्रियाकलाप एवं सामाजिक मान्यताओं की और भी संकेत किया गया हैं।जन जन के प्रिय मावजी महाराज के साहित्य को जानने समझने एवं उसमें निहित लौकिक व पारलौकिक तत्वों का ज्ञान, कृष्ण का बाल रूप, उसकी लीलाओं का रस और साहित्य में निहित भविष्यवाणियों को जानने, समझने के उद्‌देष्य से सन् 2000 में मावजी फाउंडेषन की स्थापना की गई। इस हेतु कला विद्वान डॉ. रविन्द्र पण्ड्या को इन ग्रंथों के अनुवाद, संरक्षण एवं प्रचार प्रसार की जिम्मेदारी दी गई। महारास स्कन्द का हिन्दी अनुवाद, रूपान्तरण, व्याख्या तथा सम्पादन कार्य हेतु डॉ. शंकर लाल जी त्रिवेदी एवं श्री धनपत राय झॉ का कठिन परिश्रम देखा जा सकता है। हिन्दी अनुवाद एवं व्याख्या के पश्चात् ये ग्रंथ आमजन के पढ़ने, समझने एवं देखने में सरल हो गये परिणामस्वरूप सैकड़ों लोगों ने इसमें छिपे मर्म को जाना एवं उसका अनुसरण किया है।

संत मावजी कालीन पोथीयों में चित्र :–मावजी कालीन पोथी चित्रों में राजस्थानी अपभ्रंष शैली की झलक देखी जा सकती हैं। इन चौंपड़ों का आकार विषाल है तथा लिपि व चित्रण की दृष्टि से यह शीघ्रता से बनाये गये जान पड़ते हैं। इन ग्रंथो के अध्याय में कहीं कहीं अन्तराल देखा जाता है कुछ पृष्ठों को खाली भी छोड़ा गया हैं। सम्पूर्ण चित्रांकन में चित्र संयोजन एवं अन्तराल मेवाड़ की चित्र शैली से समानता रखता है। इन ग्रंथों में चित्रण का मुख्य विषय धार्मिक है। चित्रकारों ने मावजी को साम, श्याम या श्री कृष्ण के मनोहर बाल रूप के समान मानकर चित्रित किया है। यहाँ कृष्ण की रास लीला, बाल क्रीड़ा के साथ दशावतार एवं निष्कलंकावतार में मावजी का चित्रण हैं। अनेक देवी देवता, मावजी के माता–पिता, उनका जन्म स्थल साबला, भावपुरी आदि को चित्रण के विषय के रूप में प्रयुक्त किया गया है। यहाँ पौराणिक आख्यानों के समान चित्रपट तैयार करती युवती चित्रलेखा का उल्लेख भी आया है। नदी, वृक्ष, मछलियाँ, पशु–पक्षी, पुष्प, कमल कुंज, ग्वाले तथा ग्रामीण परिवेश का चित्रण तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था को दर्शाता हैं। जयपुर शैली के प्रतिनिधि चित्रों में जिस प्रकार कृष्ण को गोर्वधन धारण करते हुए बनाया गया है उसी प्रकार यहाँ कृष्णावतार में संत मावजी को '' बनेश्वर'' धारण किये चित्रित किया है। उनकी शारिरिक बनावट में कोमलता तथा अंग भंगिमा में दृढ़ता दिखाई देती है। यह चित्र शेषपुर मेवाड़ में हरिमंदिर में स्थित '' महारासलीला'' ग्रंथ के पृ.सं. 117 पर बना हैं। इन चित्रों का आधार भागवत पुराण माना जाता है। उसी के समान इन साहित्यों में, राधा कृष्ण का मोहक स्वरूप, गोपीयों का नृत्य, नौका विहार तथा लताओं, कुंजों, वृक्ष के झुरमुट, सघन वन आदि का चित्रण किया गया है।

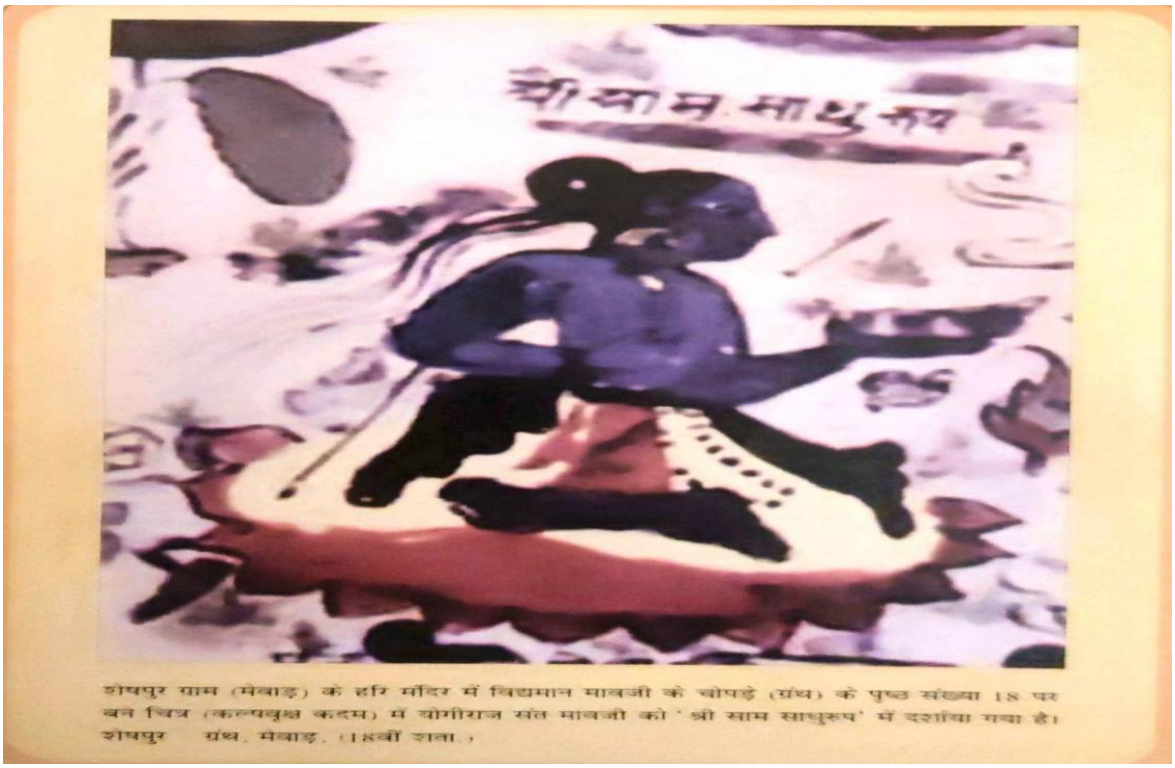

शेषपुर ग्राम (मेवाड़) के हरि मंदिर में विद्यमान मावजी के चोपड़े (ग्रंथ) के पृष्ठ संख्या 18 पर बने चित्र (कल्पवृक्ष कदम) में योगीराज संत मावजी को 'श्री साम साधुरूप' में दर्शाया गया है। शेषपुर ग्रंथ, मेवाड़, (18वीं शता.)

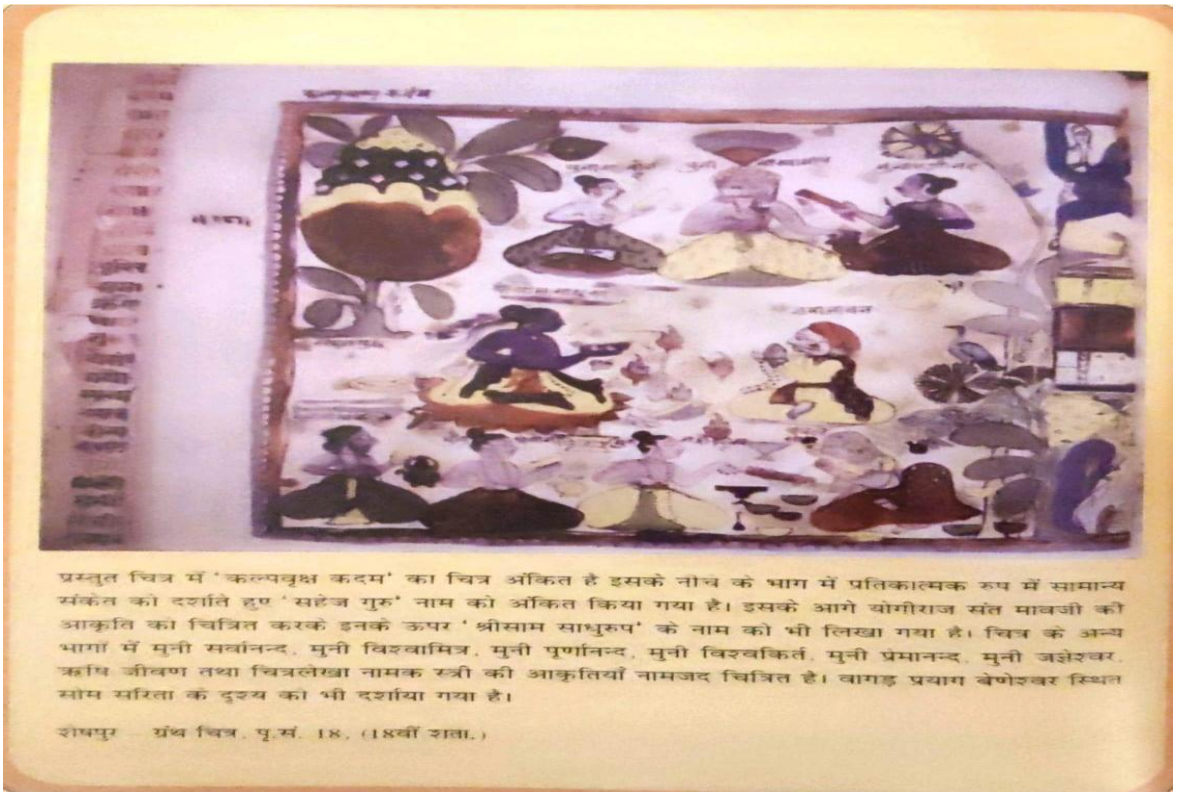

प्रस्तुत चित्र में 'कल्पवृक्ष कदम' का चित्र अंकित है इसके नीचे के भाग में प्रतिकात्मक रुप में सामान्य संकेत को दर्शाते हुए 'सहेज गुरु' नाम को अंकित किया गया है। इसके आगे योगीराज संत मावजी की आकृति को चित्रित करके इनके ऊपर 'श्रीसाम साधुरूप' के नाम को भी लिखा गया है। चित्र के अन्य भागों में मुनी सर्वानन्द, मुनी विश्वामित्र, मुनी पूर्णानन्द, मुनी विश्वकिर्त, मुनी प्रेमानन्द, मुनी जज्ञेश्वर, ऋषि जीवण तथा चित्रलेखा नामक स्त्री की आकृतियाँ नामजद चित्रित है। वागड़ प्रयाग बेणेश्वर स्थित सोम सरिता के दृश्य को भी दर्शाया गया है।

शेषपुर ग्रंथ चित्र, पृ.सं. 18, (18वीं शता.)

ग्रंथों में चित्रित रूपों में रंगों का प्रयोग भी सुन्दरता से किया गया हैं। अधिकांशतः चटख एवं अमिश्रित रंग योजना देखी जा सकती हैं। यहाँ पीले, व लाल रंग का प्रयोग अधिक हुआ है साथ ही नीले रंग को शांति के भाव में ही प्रयोग किया गया है। आवश्यक्तानुसार सफेद एवं हल्के गुलाबी रंग का प्रयोग है जो मेवाड शैली के समान है। कृष्ण को प्रायः नीले रंग में ही चित्रित किया है। पहाड़ काले हैं तथा रसायनिक विधि से बने रंगों का उपयोग हुआ हैं। साबला स्थित ग्रन्थ में फलक 36 पर मटकी फोडने के चित्र में संयोजन मेवाड शैली के समान ही हैं। इसी प्रकार स्त्री पुरूष का पहनावा, उनके आभूषण एवं बनावट में भी मेवाड शैली की झलक देखी जा सकती है साथ ही ब्रज प्रदेश की संस्कृति भी दिखाई पडती है। डॉ. मोतीचन्द्र ने कलानिधी /अंक1/2005 के अंक में अपभ्रंश शैली की जिन विशेषताओं का वर्णन किया वैसी ही विशेषताएं मावजी महाराज के चौपडों में बने चित्रों में देखी जा सकती है, इस आधार पर इन्हें राजस्थान की अपभ्रंश शैली या मेवाड शैली से मिलता जुलता माना गया हैं।

ग्रन्थों का सामाजिक महत्व एवं उपादेयता – मावजी महाराज के इन चौपडों में प्रभुलीला, आध्यात्म के साथ साथ जीवन दर्शन के गहन भाव भी समाहित हैं। सामाजिक मान्यताओं तथा सांस्कृतिक परम्पराओं का पालन करते हुए उसमें होने वाले परिवर्तन का भी समावेश इनमें किया गया हैं। यह ग्रन्थ दीन दुखी, अमीर, गरीब तथा सभी जाति के लोगो के लिये उपयोगी हैं इसमें ऊँच नीच या जातिगत भेदभाव का स्थान नहीं हैं। मावजी के ग्रन्थ समाज को व्यसनो एवं गलत धारणाओं से दूर कर पवित्र एवं सच्चा जीवन जीने का संदेश देते हैं। इन ग्रन्थों में अछुतों के उद्धार एवं आदिवासी जातियो के धर्माधिकार को महत्त्व देते हुए सामाजिक समरसता का मंत्र जगाया है। परिवार में मर्यादित आचरण एवं विश्व चेतना में समाज का योगदान भी इसमें निहित है। इन्ही भावनाओं से आदर्श समाज की स्थापना एवं कर्मशील व्यक्तित्व को बढावा देने हेतु गोस्वामी अच्युतानन्द जी महाराज की प्रेरणा एवं प्रयासों से चौपडों में वर्णित भावों एवं उपदेशों को जनमानस तक पहुंचाने हेतु 27 मार्च 2000 को मावजी सेवा एवं संस्कृति संस्थान की स्थापना भी की गई। इसी प्रकार 2003 में मावजी फाउण्डेशन एवं मावजी शोध व प्राच्य संग्रहालय एवं कला दीर्घा भी स्थापित किए गये। साथ ही धर्मशाला, विद्यालय एवं मंदिरों का निर्माण कार्य भी करवाया गया। इन सभी प्रयासों के कारण इन साहित्यों की उपयोग में वृद्धि हुई तथा जनमानस इनके शिष्य व भक्त बन गये। यही भक्त इनका अनुसरण करते हुए हिन्दू संस्कृति के प्रचार–प्रसार में महत्वपूर्ण सूत्रधार हैं। इसकी पुष्टि संवत् 1889 में रंचित हस्तलिखित पाण्डूलिपि "बारहमासा" के पृष्ट सं. 211 पर "श्री निष्कलंक जी रा बारहमासा" में वेणवृंदावन पर राज, दुष्टो का पाप, मानव मात्र के कल्याण आदि के श्लोको से की जा सकती हैं।

इस प्रकार लोक साहित्यों में संतो ने सामाजिक सुधार की दृष्टि से न केवल याज्ञिक अनुष्ठानों और बलि का खण्डन किया अपितु वर्णभेद और जातिगत बन्धनों का भी विरोध किया। यहाँ सामाजिक सुख, यश, कीर्ति, धन, सम्पत्ति को छोड़कर त्याग और तपस्या के द्वारा ज्ञान प्राप्ति और समाज कल्याण को जीवन का ध्येय माना। यहाँ धर्म के स्थान पर कर्म काण्ड को जीवन का आधार माना गया। इस प्रकार विश्वास से प्रेरित होकर इन लोक देवताओं के अनुयायियों ने एक सूत्रता में रहते हुए लोक संस्कृति को साहित्य के माध्यम से आगे बढ़ाया है। अतः लोक साहित्य जातिगत भेद एवं

कर्मकाण्ड से उपर उठकर नैतिक आचरण, सदाचार और आदर्शो के साथ सामाजिक उत्थान का अनुसरण करने पर जोर देते हैं।

संदर्भः–

1. सांस्कृतिक विरासत एवं शिक्षा –डॉ. सत्या के. शर्मा।
2. राजस्थान का इतिहास, कला, संस्कृति, साहित्य, परम्परा एवं विरासत – डॉ. हुकुम चन्द जैन, डॉ. नारायण लाल माली।
3. साम सागर– महारास स्कन्ध, साबला ग्रंथ का हिन्दी अनुवाद।
4. संत मावजीकालीन ग्रंथ महारासलीला के लघु चित्र– रविन्द्र डी. पण्ड्या।
5. कला निबन्ध (लोक कला) – अशोक।
6. भारतीय कला के विविध स्वरूप – प्रेम चन्द्र गोस्वामी।
7. राजस्थान का सांस्कृतिक इतिहास– डॉ. गोपीनाथ शर्मा।
8. राजस्थान की सांस्कृतिक परम्परा–डॉ. जयसिंह नीरज, डॉ. भगवती लाल शर्मा।
9. भारतीय संस्कृति के मूलाधार– शिव कुमार गुप्त।
10. चित्र 1,2, साम सागर, महारास स्कन्ध (साबला ग्रंथ का का हिन्दी अनुवाद) ।